अवध में प्रचलित विविध अनुष्ठान और नारी भाव

डॉ. आर.पी. वर्मा,
असि. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय गोसाईखेड़ा,
जनपद–उन्नाव, उ.प्र.

अवध में प्रचलित कल्पों एवं अनुष्ठानों के अन्तराल में लोक संस्कृति की अनेक रत्न राशियाँ छिपी हैं जिनके अभाव में वर्तमान अवधी समाज का स्वरूप निर्धारण करना असम्भव है अतएव इन अलौकिक रत्न भण्डारों की खोज गहराई तक पैठकर होना चाहिए।

अवध की नारियों का जीवन इन कल्पों, व्रतों तथा त्यौहारों से प्रति छायित है। इनकी अमिट छाप उसके सरल मानस में देखी जा सकती है। उसने अनेक प्रतिकूल परिस्थितियों में भी इन अनुष्ठानिक व्रतों एवं त्यौहारों को सुरक्षित रखा है।

भारत धर्म प्रधान देश है। धर्म और उसके अलौकिक मूल्यों को जीवित रखने का एकमात्र श्रेय नारी को ही है। इसका कारण यह है कि उसका सम्बन्ध गृह से होता है अतएव वह अपने उत्तरदायित्वों को समझते हुए इन व्रत एवं त्यौहारों का अनुष्ठान करती है। वह सदा पारिवारिक मंगल कामना में व्यग्र रहती है।

लोक प्रसिद्धि में व्रत और उपवास में कोई भेद नहीं माना जाता है। सामान्य प्रयोग में दोनों पर्याय हैं परन्तु वास्तव में व्रत और उपवास में अन्तर है। व्रत में भोजन किया जा सकता है परन्तु उपवास में निराहार रहना पड़ता है। 'उपवास' शब्द का तात्पर्य दुर्गुणों एवं दोषों का निराकरण करके गुणों के साथ वास करना है। इससे स्पष्ट होता है कि मन की शुद्धि एवं शान्ति के लिए उपवास किया जाता है। कभी वह अपने पति के लिए, कभी संतान के लिए, कभी परिवार के अन्य व्यक्तियों के लिए चिंतित रहती है। वह इन व्रत एवं त्यौहारों से अपने उद्देश्य की पूर्ति की चेष्टा करती है। अतएव अवध में प्रतिमास कोई न कोई व्रत एवं त्यौहार किसी न किसी रूप में अवश्य मनाया जाता है।

ग्रहस्थ जीवन को सुखी एवं समृद्ध बनाने के लिए विविध प्रकार के व्रत, अनुष्ठान नारियों के द्वारा किये जाते हैं। इन अनुष्ठानों में विविध प्रकार के व्रत, त्यौहार तथा देवी–देवताओं की उपासना होती है। एक गीत में देवी को आदि शक्ति का प्रतीक बताया गया है। देवी की माया तीनों लोकों में व्याप्त है। वह समस्त विश्वास की जननी हैं अतएव सबके दुःख को दूर करने वाली है–

जगत जननी जगदम्बा भवानी, मुक्ति भक्त की खानी।
आदि शक्ति है नाम तुमारो, तीनों लोक रचानी।
शक्ति तिहु लोक माँ व्यापक, ब्रह्मलोक सब वस कर मानी।
आप तौ वह सारी जगत की माता, दासी जान सब दुःख नसानी।
मानुष जनम का कवन ठिकाना, पाप नसाय चरन चित लानी।
जगत जननी जगदम्ब भवानी, मुक्ति भक्त की खानी।

प्रत्येक शुभ कार्य के पूर्व देवी की पूजा की जाती है। वह अपने भक्त के कष्टों को यथाशीघ्र दूर कर देती है। माता जिस प्रकार अपने पुत्र को दुःख में नहीं देख सकती उसी प्रकार देवी अपने भक्त को किसी प्रकार से दुःखी नहीं देख सकती। एक लोकगीत में देवी के विभिन्न नामों व स्थानों का वर्णन किया गया है। काली ली का निवास स्थान कलकत्ता है उनकी एक वहन ललिता देवी हैं जिसका निवास नैमिषारण्य में है। भुंइया देवी का स्थान लखनऊ में है। तपेश्वरी देवी कानपुर तथा मंशा देवी विन्ध्याचल में रहती हैं–

हँस पूछे सिरी भगवान शारदा कै बहिनी,
एक बहिनी कतकत्ते बसत हैं काली देवी नाम।
हँस पूछे.....।
एक बहिनी नीमसार बसत हैं, जिनका ललता देवी नाम। हँस पूछे.....।
एक बहिनी लखनऊ बसत हैं जिनका भुइंया देवी नाम। हँस पूछे.....।
एक बहिनी कानपुर बसत हैं जिनका मंसा देवी नाम। हँस पूछे.....।

पति के कल्याणार्थ अनुष्ठान

पति–पत्नी का सम्बन्ध अटूट होता है। एक बार वैवाहिक सम्बन्ध के स्थापित हो जाने के पश्चात् उसको समाप्त करने की अनुमति भारतीय संस्कृति नहीं प्रदान करती। लोक साहित्य में पति–पत्नी के सम्बन्ध में दृढ़ बताया गया है। पति की मृत्यु के अनन्तर पत्नी अपने जीवन को रो–रोकर काट डालती है। भारतीय संस्कृति पिता को केवल एक ही बार कन्यादान का अधिकार प्रदान करती है। दान देने के पश्चात् वापस लेने का विधान नहीं है। प्रस्तुत लोकगीत में एक पत्नी की मनोभावना का उद्घाटन हुआ है जिसमें उसने व्रत का अनुष्ठान पति के कल्याणार्थ किया है–

पूस मास पिया बरत तुमार। मैं बरती पाँचों इतवार।।
नहाय खोरि के देहुँ असीस। जीवहुँ कन्त तुँ लाख बरीस।

पत्नी सदैव पति के साथ रहने की कामना करती है। पति के साथ रहने पर हर प्रकार के दुःख को सुख समझकर सहन कर लेती है। सीता अपने जन्म को निरर्थक मानती हैं, यदि वे पति के साथ वन न जा सकें। उनका मत है कि वन में पति अनेक कष्टों को सहन करे और वह महल में सुखपूर्वक निवास करे यह उचित न होगा। अतएव उसको अपने पति के साथ वन जाने का आग्रह है–

अरी हमरे जीवै का धिक्कार, स्वामी वन का चले हमार।
हम रही हाय महलन माँ, मनई कष्ट सहै बन माँ।
हम पति–वरता हय नार, हरदम रहब अग्याकारी।
अरी हम जाई संग सिधार, स्वामी वन का चले हमार।
हम बन माँ पति केर सेवा करी, स्वामी केर चरन दबाई।
अरी हम होय जाई भव में पार, स्वामी वन का चले हमार।
हम संग वन का जाई, सेवा केर फल पाई।

मानस की उक्ति भी इस प्रसंग में विशेष दृष्टव्य है–

तनु धनु धाम धारनि पुर राजू। पति विहीन सब सोक समाजू।।
भोग रोग सम भूषण मारू। जम जातना सरिस संसारू।।

प्राणनाथ तुम्ह बिनु जग माहीं। मों कहुँ सुखद कतहुँ कछु नाहीं।।

अवध में वट सावित्री (बरसाइत) का व्रत प्रत्येक सौभाग्यवती स्त्रियाँ, ज्येष्ठ कृष्णा त्रयोदशी से अमावस्या तक अपने पति की दीर्घायु तथा मंगल कामना हेतु करती हैं क्योंकि वट वृक्ष के नीचे सत्यवान को जीवन दान मिला था। स्त्रियाँ कथा सुनती हैं और पूजा करती हैं।

पत्नी अपने पति के लिए सर्वस्व त्याग करती है। अपने प्राणों को उत्सर्ग करके पति की रक्षा करना भारतीय नारियों का पुनीत कर्तव्य है। इस नारी दृष्टिकोण को वट सावित्री कथा के एक अंश में व्यक्त किया गया है, "जब बहुत दिन बीत गवा और वहु समयहु आय गवा जबकि सत्यवान मरै वाला रहे। जब सावितरी देखिस की चउथे दिन इनका मरैक है तब यहु बरत करै लाग। जउने दिन वहिका मरैक रहे वहि दिन सावितरी पहले अपने का शुद्ध करैक बाद सुरुज देउता केरी पूजा कीहिस। यहि समयै सतवान कुल्हारी लैके जंगल माँ लकड़ी काटै चल दीहिस।"

पति के सुख के लिए नारी असाध्य कार्यों को भी साध्य कर देती है। पार्वती जी ने भगवान शिव को प्राप्त करने के लिए दीर्घकाल तक कठोर तप किया। उस कठोर साधना के परिणाम स्वरूप उन्हें भगवान शिव का सामीप्य सदैव के लिए प्राप्त हो गया। नारी की अभिलाषा होती है कि जन्म–जन्मांतरों में उसी पति को पावे। इसी उद्देदश्य से नारियाँ हरितालिका व्रत का अनुष्ठान करती हैं। यह व्रत भाद्रपद शुक्ला द्वितीया को मनाया जाता है। नारियाँ निर्जला व्रत रखकर पति के कल्याण की कामना करती हैं। कथा का विकास शंकर–पार्वती सम्वाद के रूप में होता है, "भादों महीना केरी हस्त नखत से युक्त तितिया का बहिकी पूजा कर लेस मेहरारू सब तरन केरे पापन से छूट जाती है। हे देवी तुम तो युद्धि बरत का आजु से बहुत पहिले हिमालय पर किये रहिउ, वहि कथा का हम तुम से कहित है, शिव जी कहिन्य कि भारत केरी उत्तर तरफ एक बड़ा नीक औरु पहारन माँ बड़ा पहार हिमवान नाम केर है। वहिके आस पास तरह–तरह केरी भूमि ह। बहुत तरह केंरे बिरवा उहां लगे हैं तीपर अपसरा नाचा करती हैं। वहिकी चोटी हमेसा बादलन का छुआ करत है।"

हे पारवती तुम यहाँ पर कठिन तप करती रहिउ। पति को प्राप्त करने के लिए कितनी कठोर साधना करनी पड़ी है ? कथा में आगे स्पष्ट किया गया है, "बारह बरिस तक तुम उलटी टंगकै खाली धुआँ पीकै रहिउ। चौंसठ बरिस तक पत्ता ही खायेव। माघ केरे महिना माँ तुम पानी माँ ही रहिउ और बैसाख केरे महीना माँ तुम पानी नाहीं पियेव और वैशाख माँ पंचाग्नि तपती रहेउ। अइस कठोर तप देखकै तुमरे बप्पा का बड़ा दुःख भवा। उनका यू दुःख भवा कि उइ बिटियाा का किका दें। जब वहु यहि बारे माँ सोचत रहें तबै नारद मुनि उहाँ पर आयगै। नारद से पूछै पर यू मालूम भवा कि भगवान विस्नु केरे बराबर अच्छा वर वरमा, इन्दर और शिव इमा से कउनो नाहीं है। यहि मारे हमु यहु कहब की तुम आपन बिटिया विस्नु भगवान का ही देव।

कथा के अन्त में इस बात पर बल दिया जाता है कि स्त्रियाँ ऐसे अनुष्ठान को नहीं करती हैं तो वे बड़ी अधोगति को प्राप्त होती हैं, "तीज वाले दिन अनाज खाय वाली मेहरारू सूकरी, फल खाय वाली बँदरिया, पानी पियै वाली जोंक, दूध पियै वाली साँपिन, मांस खाय वाली बाघिन, दही खाय वाली बिलरिया, मिठाई खाय वाली चींटी और सबै चीजन का खाय वाली दूसरे जनम माँ माखी होत है। सोवय से अजगरी और मनई का धोखा देय से मुरगी होता है।"

ऐसी भावना को व्यक्त करने का एक मात्र कारण यह है कि स्त्रियाँ इस अनुष्ठान के महत्व को समझकर श्रद्धा तथा शुद्धता से व्रत करें।

करवा चौथ का त्योहार कार्तिक के प्रथम पक्ष में चतुर्थी के दिन मनाया जाता है। विवाहित स्त्रियाँ इस दिन निर्जला व्रत रखकर पति की मंगल कामना करती हैं। दीवारों पर तथा गेडुवे पर अनेक प्रकार के चित्र बनाती हैं। वे अपने हृदय में व्याप्त विश्वास को इन्हीं चित्रों के माध्यम से स्पष्ट कर देती हैं। इसमें कथा कही जाती है जिसका विकास पहले भाई बहन के प्रति स्नेह प्रकट करते हुए कहता है। व्रत वाले दिन जब भाई को ज्ञात होता है कि उसकी बहन ने आज दिन भर किसी भी वस्तु को ग्रहण नहीं किया है तो उसे कष्ट होता है और वह उसे भोजन खिलाने का प्रयत्न करता है पर उस अबोध को नहीं ज्ञात है कि आज उसकी बहन ने व्रत किया है। भाई बहन को कृत्रिम चन्द्र दिखा देता है तथा उसको फल आदि खिला देता है। उन वस्तुओं को ग्रहण करना ही था कि उसे अपशकुन होने लगे। उसकी यह धारणा थी कि बिना चन्द्र दर्शन के किसी वस्तु के ग्रहण कर लेने का परिणाम दुःखदायी हो सकता है, "भइया नांही माने। बहिनी बनाउटी चाँद का दरसन करावत गये। अम्मा मना करती रहीं। चुप्पे से भइया बहिनी के लिए मेवा, फल लायकै दै दीहिन्य। चन्दा पहिर कउर मुँह माँ डालै लगी तौ बाल निकल आवा। दुसर कउर खाय वाली रहै कि यहु संदेशा वहिकी ससुराल से आवा कि राजकुमार का साँप काट लीईस है। चन्दा उठकै अम्मा केरे पास गईं। आँखिन माँ पानी लाज के मारे आँखिन माँ छिपाये रही। पाँव काँपत रहे। अम्मा तौ पाथर बन गई रहैं। उनकी आँखिन ते खून केरे आँसू बहत रहे।"

चन्दा के पति को सर्प ने काट लिया था। उसने यह सुना था कि सर्प के द्वारा काटा हुआ व्यक्ति बहुत दिन तक जीवित रहता है अतः उसने उसका दाह संस्कार नहीं होने दिया। घर के सदस्य उसके इस कृत्य पर व्यंग करने लगे। यह कहते कि बड़ी आई हैं जीवित करने वाली सावित्री। कहीं मरा हुआ व्यक्ति जीवित किया जा सकता है ? चन्दा खिन्न व निराश हो गयी थी परन्तु क्या करती ? उसने किसी को प्रत्युत्तर नहीं दिया वरन् अपना कार्य करने लगी।

"चन्दा दिन–रात राजकुमार केर मूड अपनी गोदी माँ धरे रहत। केलन केर नये–नये पत्तन का रोज बिछौना बनावत और केले के पत्ते उइ पै डार देत। वह खुदै सूख कै काँटा होयगै।"

नारी स्वभाव की विशेषता है कि यदि कोई उसे कल्याणकारी मार्ग का निर्देश करता है तो वह श्रद्धा तथा विश्वास भाव से उसको दूर करने का उपाय खोजने लगती है। इसको पूर्ण करने में वह प्रत्येक कष्ट को हर्षपूर्वक सहन करती है। एक वृद्ध महिला ने उसे निर्देश दिया, "आज तुम निरजला बरत करौ। रात पड़े सुहाग कै देवी रूप धरके अइयें। वहु सुहागु कै देवी आहिं। वहु तुमार परिच्छा लेइ हैं। तुमका दातन ते कटियें, मरियें मुला तुम उनकेर पाँव नाहिं छोड़यो।" रात्रि में देवी आई और उन्होंने कहा, "पति, भाई, पिता तथा अन्य सम्बन्धियों के लिए करवा लो।"

नारी के विश्वास को सफलता मिली। सोहाग की देवी ने उसकी चार बार परीक्षा ली। अन्त में उसकी उपासना एवं भक्ति से हर्षित होकर अपनी कनिष्ठा का एक रक्त कण राजकुमार पर छिड़क दिया। उसका पति जीवित हो उठा। देवी तुरन्त अन्तर्धान हो गई। नारी अभिष्ट कार्य की सिद्धि पर हर्षित हो उठी। असाध्य कार्य को साध्य कर लेने के पश्चात् उसके अन्य सम्बन्धी चकित हो गये। सास भी पुत्र को जीवित देखकर आश्चर्य से भर गई। हृदय में आश्चर्य भाव को छिपाते हुए आशीष देते हुए बोली, "बहू बुढत्र सुहागिन होव, दूधौ नहाव पूतन फलौ।"

यह व्रत चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से आरम्भ होकर तृतीया को पूर्ण होता हैं सौभाग्यकांक्षिणी महिलायें इस व्रत से प्रेरणा प्राप्त कर बाल–वैधव्य के दोष से बच जाती है। व्रत के एक अंश में स्पष्ट किया गया है कि यदि पत्नी पति की भली

प्रकार से सेवा करते हुए उसकी आज्ञा का अनुसरण करे तो वह जीवन भर सौभाग्यशालिनी रह सकती है। पार्वती जी एक बाल–विधवा को एक ऐसा उपाय बताती है जिससे वह पुनः वैधव्य कष्ट से बच सके। "अगर या आजै ते अरुन्धती केरे पवितर चरित का गुन गन करै लागै तौ दुसरे जनम माँ यहिके पाप दूर होय जइये। वा इन सब बातन का सुनकै वैसा ही कीहिस जिकर फलु या भवा कि वा दूसरे जनम माँ सुखी और सौभाग्यशाली होयगै।"

गनगौर व्रत चैत्र शुक्ला तृतीया को होता है। सौभाग्यवती स्त्रियाँ पति के कल्याणार्थ इस व्रत का अनुष्ठान करती हैं। मध्याह्न तक उपवास रखकर पूजन के समय रेणुका की गौर स्थापित करके उस पर चूड़ी, महावर, सिन्दूर, चन्दन, धूप, नैवेद्य, पुष्प, नये वस्त्र आदि अर्पण करती हैं। कथा श्रवण के अनन्तर गौर पर लगा सिंदूर अपनी माँग में लगा लेती है। गनगौर का प्रसाद पुरुषों को नहीं दिया जाता है।

एक निर्धन नारी को सौभाग्य का वरदान प्राप्त होते देखकर धनी एवं सम्पन्न नारियों ने भी ऐसा ही किया। इस पर पार्वती जी ने उन नारियों को पति सेवा का जो संदेश दिया वह अनुकरणीय है। पारवती कहिन्य, "हम आपन अंगुरी चीरकै रक्त केर सुहाग रस देबै। जब मेहरारू पूर करैं लागीं तब पारवती आपन अंगुरी चीर कै खून उन पैर दिरक कै कहिन्य, "बढ़िया कपरन औरु गहनन ते अपने मनई का रिझावै। उनकी सेवा करौ तबहीं तुम सौभाग्यशालिनी कहलइवो।"

पुरा काल की बात है कि सोमा धोबिन ने अपने पातिव्रत धर्म से अपने पति को जीवित कर लिया था इसलिए अवध में नारियाँ पति की मंगल कामना हेतु 'सोमा' व्रत का अनुष्ठान करती हैं।

स्त्रियाँ सुयोग्य एवं दीर्घायु पति को पाने के लिये क्या नहीं करतीं ? एक कन्या को एक साधु से ज्ञात होता है कि उसके भाग्य में सोहाग नहीं है। वह चिंतित होती है पर वह असाध्य कार्य को भी साध्य करने का प्रयास करती है। कथा के एक अंश में स्पष्ट किया गया है कि कन्या की सेवा–भाव से सन्तुष्ट होकर सोमा धोबिन कहती है, "बिटिया माँग तो बड़ी मुश्किल है। मुला तुमरी सेवा से उद्धार भी तो हायेक है। जाओ बिआव रचाओ। तुमरे करम और धरमते हम तुमका सुहाग देवै।"

अपनी वांछित वस्तु प्राप्त करने के उपरान्त नारी किसी वस्तु की इच्छा शेष नहीं रहती। विवाह आयोजित किया गया परन्तु सातवीं भाँवर के साथ ही कन्या के पति का प्राणान्त हो गया। चारों ओर शोक व कोलाहल का वातावरण व्याप्त हो गया। सोमा धोबिन तुरन्त जाकर कन्या की माँग भर देती है। उसके पति में पुनः जीवन के लक्षण दिखाई पड़ते हैं। शोकपूर्ण वातावरण पुनः हर्ष में परिणत हो जाता है। सोमा उठकर चुपके से बाहर आती है और रास्ते में 108 कंकड़ों को चुनकर पीपल के फेरे लगाती है जैसे–जैसे वह फेरे लगाती है वैसे ही उसके पति के प्राण आने लगते हैं।

ऐसे ही अन्यान्य त्यौहारों एवं व्रतों के माध्यम से पति के प्रति मंगल कामना प्रदर्शित की गई है।

नारी मानस में स्थित वात्सल्य भाव ने उसे अनेक लौकिक एवं अलौकिक अनुष्ठानों की ओर प्रेरित किया है। वात्सल्य भावना ने उसे पुत्र प्राप्ति हेतु अनेक व्रतों एवं त्यौहारों का आश्रय ग्रहण किया है। उसे विदित है कि बन्ध्यात्व एक अभिशाप है। एक असह्य वेदना है पर विश्वास है कि इस अभिशाप का निवारण केवल देवी जी ही कर सकती है। अतः हृदय की बात वह देवी जी के सम्मुख व्यक्त करती है–

मइया के दुवारे एक सुन्दर ठाड़ी अँसुवन, भीजै झिन सारी हो माय।

कि तोरे सास–ससुर दुःख डारी की कमल, दई गारी हो माय।

न मोरे सास–ससुर दुःख डारी, न बलम दई गारी हो माय।

मइया घर में लोगा मोहे बाँझ कहत हैं, बाँझ का नाम मिटाओ हो माय।

देवी जी द्रवित हो उठती हैं तथा आशीर्वाद देकर उसे आश्वस्त करती हैं।

यह व्रत मुक्तावरण सप्तमी (भाद्रपद शुक्ला सप्तमी) को होता है। सन्तान प्राप्ति की इच्छा से नारियाँ इस व्रत का अनुष्ठान करती हैं। रात्रि में कथा श्रवण के उपरान्त पूजा की जाती है। कथा का आरम्भ कृष्ण–युधिष्ठिर सम्वाद से होता है, "पुराने समय माँ अजोध्या नगरी माँ नकुल नाम केर राजा रहत रहैं। तिकरी पिरिया चन्दर मुखी बहुतै सुन्दर रहै। वहि नगर माँ विस्नु गुपुत नाम के एक ब्राह्मन रहत रहैं। वहिकी मेहरारू भदरमखी बहुतै नीक रहै। चन्दरमुखी और भदरमुखी दूनो जनी माँ बड़ी पिरीत रहै और वह मेहरारू नहायक मारे नदी पै पहुँची।"

एक स्त्री को जब विदित होता है कि अमुख अनुष्ठान करने से उसकी सखी ने पुत्र प्राप्त किया है तो उसने भी उस उपाय को करना आरम्भ कर दिया, "उहाँ दूनो नहायक बाद शिव–पारवती का चन्दन और फूलन से पूजा कीहिन्य। यहु देखकै दूसर पूछिस, यू का करती हव ? तब वह उत्तर दीहिए, हे सखी आजु हम पारवती जी के साथ संकर जी केरी पूजा कीहिन्य और यहु डोरा तब तक बाँधे रह्यो जब तक देह माँ जीव रहे। यहि संतति परद बरत का नाम मुक्ता मरन आय।"

पिता स्वभाव से कठोर होता है परन्तु माता का स्वभाव कोमल होता है अतएव माता कभी पुत्री की अमंगल कामना नहीं करती। यदि उसे अनिष्ट हो जाने का आभास होने लगता है तब वह अनेक मनौतियाँ करने लगती हैं। हरछठ की कथा माता की इसी भावना का उद्घाटन करती है, "एक राजा रहैं उइ एक तालाब बनवाइन औरू बहुत सा रुपैयो दानौ माँ दीहिन्य मुला महिमाँ पानी नाँही आवा तब राजा बड़े–बड़े पण्डितन का बुलवायकै इका कारण पूछिन्ह। पण्डित जवाब दीहिन्य, तुम अपने लरकवा का बलिदान कर देव तब वहिमा पानी अइये।"

माता के लिए पुत्र का बलिदान एक अभूतपूर्वक कार्य है। बड़े से बड़ा त्याग तथा हानि माता प्रसन्नतापूर्वक उठा सकती है परन्तु अपने पुत्र का बलिदान उसके द्वारा असम्भव है। राजा केरे एके लरकवा रहै राजा सोच माँ पड़ गवा।" अतः राजा ने बहाना बनाकर रानी को उसके मायके भेज दिया। वहाँ पर पहुँचकर रानी को ज्ञात हुआ कि घर पर सब कुशल है। उसको अपने मायके भेज दिया। वहाँ पर पहुंचकर रानी को ज्ञात हुआ कि घर पर सब कुशल है। उसको अपने पुत्र के सम्बन्ध में शंका होने लगी। वह वापस लौट पड़ी। "रानी केर दिलु घबरात रहै। वह कहत रही अगर हमरे परिवार माँ भला होइये तब हम तुमार कुंदरा भरिबे।"

माता का हृदय करुणा से आप्लावित हो उठता है अतः रानी रोती हुई पालकी से उतरकर नदी के तीर पर आई जहाँ पर एक वृद्धा बैठी थी। नारी में सहानूभूति की भावना पुरुषों से अधिक होती है। वृद्धा ने रानी से पूछा तथा कारण जानकर उसे एक अनुष्ठान बताया, "बिटिया तुम घर जायकै पूजा करौ। पूजा करैक तरकीबौ बताइस, छमेल का चबेना और दही। इन सबका ढाँक केरे पत्तन माँ रखेव। रानी यहिका सुनकै तुरतै पालकी माँ बैठगै औरु कहार वहिका जोते खेतन का बचावत भए घर पहुँचाय दीहिन्य। घर पै जायकै रानी नीकी तरह से पूजा कीहिस। पूजा केर परभाव यू भवा कि लरकवा हँसत भवा वहिकी गोद माँ आयकै गिर पड़ा। उनके सागर माँ पानी आय गवा और उनका लरकवा मिल गवा।"

कथा में मंगल कामना व्यक्त करते हुए कहा जाता है, "जइसे उनके दिन बहुरें तइसे सबके दि बहरें।"

माता यदि पुत्र के लिए सर्वस्व त्याग के लिए तत्पर रहती है तो पुत्र भी माता के लिए हर प्रकार के कष्ट उठाने के लिए प्रस्तुत रहता है। इस अवसर पर माता दिन भर उपवास करके रात्रि में प्रसाद ग्रहण करती है तत्पश्चात् बायना निकालकर आस–पड़ोस में वितरित करती है। इस अवसर पर तिलकुट बनाने की प्रथा है। एक पुत्र अपनी माँ के सम्बन्ध में सुनकर यह कल्पना करने लगता है कि क्या उसकी माँ उसे स्नेह नहीं करती ? परन्तु हृदय नकारात्मक की उत्तर देता है, "भइया अब सतजुग नाहीं है पहिले लइस पिरेम आजकल केरी अम्मा थोरी करती हैं। केसब अब तुम नादान नाहीं हव। अम्मा का सब सौंप देत हव। बुढ़िया केरी अक्किल सठियाय गई है। केसो सब सुनत रहै। दुनिया माँ अम्मा केरे सिवाय औरु कउन वहिका है ?"

माता अपने पुत्र को अकेले कहीं नहीं जाने देती। उसे निरन्तर भय बना रहता है कि बाहर जाने से उसे अनेक आपदाओं का सामना करना पड़ेगा। केशव बाहर जाना चाहता है परन्तु माता उसे अकेले नहीं छोड़ना चाहती। वह मन ही मन पुत्र को आशीर्वाद देती हुई कामना करती है, "भगवान हमरे लाल का हमेसा बचायो। हम तुमका आपन पूत देहइत है। यहु कहत–कहत बुढ़िया केरी आँखिन माँ आंसू आय गये।"

पुत्र चला माता का हृदय रो पड़ा पर रोना तो अपशकुन होता है। माता स्वप्न में भी पुत्र के लिए अमंगल की भावना हृदय में नहीं ला सकती। अतएव वह अश्रुओं को बाहर नहीं निकालती और कहती है, "अच्छा खाना तो लेते जाओ भइया। एक पोटकिया माँ खाना दुसरे माँ परसाद बाँध दीहिस और कहिस, कि जबहुँ तुम पर विपत परै तब तुम इन तिलन का अपने चारों तरफ छिरक लिह्यों और भगवान केर नाम लेय लागेव।"

होई के व्रत में माता पुत्र के कल्याण की कामना करती है। यह व्रत कार्तिक के प्रथम पक्ष में अष्टमी को मनाया जाता है। माता निर्जला व्रत रखती हैं तथा सन्ध्या के समय कहानी सुनकर बायना सास, जेठानी, ननद आदि सम्बन्धियों को देती हैं तत्पश्चात स्वयं भोजन करती हैं। इस अवसर पर दीवारों पर कुछ चित्र बनाये जाते हैं जिसे "होई माड़ना" कहते हैं। ये चित्र नारी–कला के सुन्दर आलेख है।

मानव में अनुकरण की एक स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। जब एक नारी दूसरी नारी को पुत्र–प्राप्ति हेतु कोई अनुष्ठान करते देखती हैं तो वह भी उसे करने लगती है। चमेली जो चम्पो की पड़ोसिन थी जब उसे ज्ञात होता है कि पुत्र–प्राप्ति हेतु चम्पो प्रतिदिन देवी के मन्दिर में जाती है तो वह भी जाने लगती है। उसे विश्वास होता है कि घट–घट व्यापी परमात्मा उसकी अभिलाषा अवश्य पूरी करेंगे अतः "चमेरी फूलन केर गजरा देविन केरे गले माँ डाल दीहिस। देविन पूछिन्ह, "तुम का चहती हव ?" ध्यानमग्न होने के कारण अचानक चमेली के मुख ये निकल गया, "एक लरकवा।" परन्तु चम्पो को तो विश्वास था कि भगवान तो घट–घट में व्याप्त हैं फिर उनको अपनी अभिलाषा क्यों बतलाई जाय ? वह तो भक्त की भावना को स्वयं ही जानते हैं, "का तुमहुक बतावैक परी अम्मा ?" अतः देवी चम्पो और चमेली की मातृत्व भावना को जानने के लिए परीक्षा लेती हैं। देवी कहती हैं, "इहाँ से उत्तर केरी तरफ ऐ बहुत बड़ा बगीचा है, उहाँ पर बहुत से लरकवा हैं जउन तुम चाहौ लै आवौ। अगर तुम लरकवा नाँही लाय पायेव तब तुमरे लरकवा नाहीं होइये।" माता का हृदय कोमल एवं सरल होने के कारण किसी बालक को रोते नहीं देख सकता।

अतः चम्पो एक लरकवा का बड़े पियार से अपने पास बुलाइस व बच्चा घबड़ाया कै जोर से रोवय लाग और भाग गवा।" चम्पो घबड़ाया गई परन्तु दूसरी ओर चमेली जिसका कार्य उचित नहीं था तथा जिसके हृदय में लेश मात्र भी दयाभाव नहीं था, उसने "एक लरकवा का पकड़ैक चाहिस मुला बहु डरकै भागा चाहत रहै पर चमेली वहिका जोर से पकड़ लीहिस। चमेली केरे हाथन माँ बालन केर गुच्छा आय गवा। बच्चा बिलख–बिलख कर रोवय लाग। देखत–देखत न मालूम भवा कि सब कहाँ बिलाय गवा ?" इतने माँ उइ दुनो जनी अपने का देविन केरे सामने पाइन।"

चमेली के निर्दयी व्यवहार से देवी क्रोधित हुई पर चम्पो के कोमल व्यवहार से प्रसन्न होकर देवी ने आशीर्वाद दिया। "नवें महीना तुमार गोद भरिये।"

"हमका.....।" चमेली ने पूछा। देवी कड़क कर बोली, "चम्पो बच्चा नांही लाई तो का भवा ? बहिके माँ केर दिलू तौ आय।"

तुलसी का व्रत पुत्र–प्राप्ति की कामना से प्रेरित होकर किया जाता है। यह कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष में किया जाता है। तुलसी के पौधे को श्रद्धापूर्वक लहँगा, दुपट्टा पहनाकर भोग लगाया जाता है तत्पश्चात् कपूर की आरती की जाती है। नारियाँ पूजा करते–करते आत्म विभोर हो जाती है–

नमो नमो तुलसा महारानी नमो–नमो।
धन तुलसा पूरन तप कीन्हों,
सालिग राम बनी पटरानी नमो–नमो।
नमो नमो तुलसा महारानी नमो.....।
धूप दीप नैवेद्य आरती नमो–नमो।
पुष्पन की बरखा बरखानी नमो....।
नमो नमो तुलसा महारानी नमो....।
छप्पन भोग छतीसों व्यंजन नमो–नमो।

आरती करने के पश्चात् कथा भी कही जाती है जिसमें नारी की मातृत्व भावना स्पष्ट होती है। कथा आती है, "धरमपुत्र केरी मेहरारु केर नामु माधवी रहै। वह राजा केरे साथ गन्ध मारदन परवत पर सुन्दर वन माँ रहत रहे। अइसे दिन–रात बीत गये। मुला बहिका यहु नाहीं मालूम होय पावाकि कइसे समय बीत गवा। कुछै दिन बाद राजा धरम धुज केरे मन माँ गियान भवा और वह वहि से अलग होयेक इच्छा कीहिन्य मुला माधवी अवै नाँहीं तिरिप्त होय पायी रहै फिरौ वहिके गरभ रह गवा। कातिक केरी पूरनिमा केरे दिन वहिसे एक लरकिवा करे जनम भवा। वहु बिटिया बहुतै नीक रहै। वहिकी आँख लइसी रहैं। होठ खूब लाल पके बिम्बाफलु केरी तरह रहैं। मन का खुस करै वाले बहिके पाँव केरे तलुवा लाल रहें। वहिके बाल घने काले खूब बड़े–बड़े रहें। दुनिया मां सब मेहरारू ते नीक रहै। यहि मारे वहिका नाम 'तुलसी' धरा गवा।"

इन विभिन्न लोक कथाओं एवं लोक गीतों में नारी की उन मनोवृत्तियों की ओर संकेत है जो उसे विविध अनुष्ठानों को करने के लिए प्रेरित करती हैं। वह अश्रु बहाती है तो पुत्र के लिए अपनी सूनी गोद को भरने के लिए, अपनी वात्सल्य भावना की पूर्ति के लिए। उसे दृढ़ विश्वास है कि पुत्र केवल प्रभुकृपा से ही प्राप्त किया जा सकता है क्योंकि ईश्वर असम्भव कार्य को भी सम्भव कर सकता है।

भारतीय धर्म ग्रन्थों के अनुसार केवल उसी कन्या से पाणिग्रहण करना चाहिए जिस कन्या के कम से कम एक भाई अवश्य हो। बहन के विवाह में लावा परछने का कार्य भाई करता है। विदाई के अवसर पर भाई बहन की पालकी पकड़कर रोता है परन्तु यह विचार करे कि वह

बहन को अधिक समय तक घर पर नहीं रोक सकता साश्रु नेत्रों से उसे विदा करता है।

भारतीय संस्कृति के अनुसार भाई–बहन का सम्बन्ध अत्यन्त पवित्र निर्धारित किया गया है। भाई के कारण बहन सौभाग्यशाली समझी जाती है। इसका रहस्य यह है कि भाई प्रत्येक पर्व पर किसी न किसी प्रकार का उपहार बहन को अवश्य प्रदान करता है।

भाई के कल्याण के लिए बहन अनेकानेक अनुष्ठान करती है। यदि एक ओर बहन के सम्मान की रक्षा भाई करता है तो दूसरी ओर बहन भाई के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने के लिए प्रस्तुत रहती है। भाई–बहन के इस स्नेह का संकेत निम्न व्रतों एवं त्यौहारों से होता है।

नागपंचमी के त्यौहार में बहन के पावन स्नेह की अभिव्यक्ति हुई है। यह त्यौहार श्रावण कृष्ण शुक्ला पंचमी को मनाया जाता है। इसे 'गुड़िया' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। सायंकाल कपड़े की गुड़िया पीटी जाती है। भीगे हुए चनो का उबाल कर मिर्च लगाकर बनाया जाता है जिसे अवध में 'घुघरी' की संज्ञा प्रदान की जाती है। एक डलिया में 'घुघरी' रखकर चौराहों पर बहनें लेकर जाती हैं जहाँ पर भाई उन गुड़ियों को छोटी–छोटी छड़ियों से पीटते हैं तथा घुघरी को निर्धनों में वितरित कर दिया जाता है। उसी रात्रि में सर्पों के लिए एक कटोरे में भीगे हुए चने, दूध तथा धान के लावों को घर के एक में रख दिया जाता है तथा यह विश्वास किया जाता है कि जिस घर में नाग देवता की पूजा की जाती है उस घर में सर्पदंश का भय नहीं रहता।

नागपंचमी के त्यौहार में नारी–भाव को प्रकट करते हुए व्यक्त किया गया है कि एक नारी ने अपने मृत भाई को नाग–पूजन से जीवित कर लिया था, "पुराने जमाने माँ एक किसान मनिपुर नाम केरे सहरू माँ रहत रहे। वहिके दुई बेटवा और एक बिटियवा रहै। एक दिन हल चलावत बेरिया नागिन केरे तीनो लरकवा मर गये। नागिन उइ समय उहाँ पर नाँहीं रहै। दूसरे दिन जब वहिका यू मालूम भवा तब व बदला लेयक चली। रात माँ पहुँच कै नागिन किसान केरी लरकिवा क काटैक पहुँची। वहिका यू सब पहले ते मालूम होय गवा रहे तिमारे लरकिवा बहुत तरह ते नागिन केरी पूजा करैक बाद एक कटोरा माँ दूध और धान केर लावा धर दीहिस। उइ दिन सावन सुकुल पखमी रहै। नागिन उइ ते खुस होयकै वरदान दीहिस जिमारे वहि केर परिवार जी उठा।"

भाई न रहने पर बहन अत्यन्त दुःखी होती है। जीवन में कुछ अवसर ऐसे भी होते हैं जब बहन भाई की आवश्यकता का अनुभव करती है। एक लोक कथा में एक बहन चतुर्मास में भाई का स्मरण करती है। वह घर में अकेली रह जाती है, उसे बड़ी वेदना होती है। तब वह नाग देवता को अपना भाई बनाकर पूजा करती है। नाग देवता उसकी पूजा से प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते हैं, "सेस नाग आखिर माँ एक बुढ़वा ब्राह्मण करे भेख बनाय कै आयगै और बहिके ससुर से कहिन्य कि वहि केर हम बड़ भइया हन। बहू केरी राय लेक बाद वहु वहिका विदा कर दीहिन्य। कुछै दूर पहुचैक बाद नाग अपने असली रूप माँ प्रकट होय गवा और वहिका परताल लोक माँ लैके चले गये और खुसी से रहै लाग। उहाँ नाग केरे बच्चन का देखकै वह डर गई, लेकिन नाग भइया वहिका यहु कहकै कह हाथन माँ दिया लटकाये रहेव। अचानक एक दिन चिराग गिर जायस बच्चन केरी पूँछ कट गयी। यहि होयक कुछै दिन बाद वहु अपनी ससुराल लौट आई। वहिका सावन सुकुल पखमी का अपने धरम भइया नाग केरी सुधि फिर आवत भई। वहु नाग देउता केरी एक मूरत एक पटरा पर बनायैक पूजा कीहिस नाग देउता खुस होयकै वहिका आसिरवाद दीहिन्य जौन मारे वह पइसा वाली होय गई।"

रक्षा बन्धन (राखी) का त्यौहार

रक्षा बन्धन एक ऐतिहासिक महत्व का त्यौहार है। इससे भाई–बहन के पावन स्नेह का ज्ञान होता है। यह त्यौहार श्रावणी पूर्णिमा को मनाया जाता है। जिस बहन के भाई नहीं होता वह भाई के अभाव की कल्पना करके रो पड़ती है। मनस्तोष के लिए किसी को भाई मानकर उसकी कलाई पर राखी बांध देती है। इतिहास में इस बात का संकेत हुआ है कि सन् 1632–33 में हुमायूं ने महाराणा साँगा की पत्नी कर्णवती के सम्मान की रक्षा की थी। बहादुर शाह ने जब चित्तौड़ पर आक्रमण किया तथा उस पर विजय प्राप्त कर ली तब कर्णवती ने हुमायूँ के लिए उपहार स्वरूप राखी भेजी जिससे हुमायूँ अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

नारी आत्म सम्मान के लिए ही जीवित रहती है। भाई ही उसके सम्मान की रक्षा कर सकता है अतः वह अपने हृदय की भावना राखी के माध्यम से व्यक्त करती है।

भैया दूज का त्यौहार

रक्षा बन्धन के समान भैया दूज का भी त्यौहार नारी–लोक का प्रमुख त्यौहार होता है। यह दीपावली के पश्चात् कार्तिक शुक्ला द्वितीया को मनाया जाता है। बहनें भइयों के घर जाकर मंगल तिलक करती हैं या भाई स्वयं बहनों के घर आते हैं। यदि बहनें भाइयों से दूर होती हैं तब चने और बादाम लेकर कथाएँ कहती हैं और भाइयों को मंगल प्रसाद भेज देती हैं।

भाई को देखकर बहन अत्यन्त हर्ष का अनुभव करती है तथा भाई के लिए घी में चावल पकाने का यत्न करती हैं। भाई के पावन स्नेह में वह यह भी भूल जाती हैं कि कहीं चावल घी भी उबल सकते हैं ? अतः वह अपने भाई को उत्तर देती हुई कहती हैं, "भइया तुमरे खातिर निरे घीव माँ मीठे चाउर धरे हम जाने उनका का भवा कि अबहीं तक नाहीं गले हैं ?"

भाई ने घर वापस लौटने का विचार किया। अंधेरे में ही उठकर बहन ने आटा पीसकर लड्डू बनाया, तिलक लगाया और भाई को विदा किया। भाई के चले जाने के पश्चात् बहन ने देखा कि चक्की में सर्प पिस गया है। इस समय उसकी भावना पर गम्भीर आघात लगता है। वह चिंतित होकर भागी, "बालन का छिटकाये पागलु केरी तरह वा दौरत अपने भइया के पास आयकै कहिस, वहु लड्डू केरी पोटकिया कहाँ धरी है ? "माधो कहिस, यहु का भेखु बिखेरा है जीजी ! बावली बनी काहे चली आई हव ?" परन्तु बहन बताना नहीं चाहती वरन् कहती है, पागल होय गवा है। लाओ हमार लड्डू केरी पोटकिया।

इसी कथा में आता है कि विवाह के अवसर पर जब सर्प बदला लेने आता है तो बहन बुद्धिमत्तापूर्वक भाई की रक्षा करती है, "बिआव माँ अब तीसर भाँवर पड़ै लाग तबै साँप–साँपिन केर जोड़ा निकर आवा। उमा (बहन) केरे हाथ माँ तुम्बी रहै। वहु (उमा) साँप–साँपिन का वहिमा बंद कर लीहिस। अम्मा बिटिया का करेजे से लगाय लीहिन्य। भौजी और भइया जोर से रोवय लगा। बहन के हर्ष की सीमा न रही। उसने अपने भाई को काल के मुख से बचा लिया।

नारी–भाव के विकास क्रम को जानने के लिए इन व्रतों, अनुष्ठानों, उत्सवों तथा त्यौहारों का अत्यन्त महत्व है। वास्तव में इन व्रतों के इतिहास में नारी के समग्र रूप के दर्शन होते हैं। ये नाना अनुष्ठान नारी–जगत की अनूठी अभिव्यक्तियाद्द हैं, जिनमें आस्था और विश्वास का ताना–बाना है। भारतीय संस्कृति के सत्स्वरूप की झाँकी इनमें बड़े सरस ढंग से समायी हुई है।

सन्दर्भ–सूची

- आधुनिक ब्रज और अवधी काव्य में लोकतत्व– डॉ. आर.पी. वर्मा

- अवधी और उसका साहित्य – डॉ. त्रिलोकी नारायण दीक्षित
- अवधी लोक साहित्य – डॉ. सरोजनी वार्ष्णेय
- अवधी लोकगीतों का समीक्षात्मक अध्ययन–डॉ. विद्या
- अवधी लोकगीत संग्रह – डॉ. विद्याविन्दु सिंह
- अवधी लोकगीत और परंपरा – डॉ. इन्दु प्रकाश पाण्डेय
- लोक साहित्य विधाएँ एवं दिशाएँ – डॉ. कैलाश चन्द्र अग्रवाल

पत्र–पत्रिकाएँ

- अवधी भारत (जनवरी, सितम्बर, दिसम्बर 1956 ई.)
- अवधी (त्रैमासिकी) – डॉ. गिरिजा शंकर मिश्र
- नागरी प्रचारिणी पत्रिका – काशी
- सम्मेलन पत्रिका – लोक संस्कृति अंक संवत् – 2010

Copyright © 2016, Dr. R.P.Verma. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.